रमासुन्दरी
पं० रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय
हरिदास एण्ड कम्पनी

रमासुन्दरी ।

अनुवादक

पं० रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय ।

प्रकाशक

हरिदास एण्ड कम्पनी

कलकत्ता

२०१, हरिसन रोड के नरसिंह प्रेस में

बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा

मुद्रित ।

सन् १९१८

थम बार १०००) मूल्य २।)

समर्पण ।

श्रीमान् ठाकुर साहब बाघसिंहजी,

धारगाँव, इन्दौर ।

ीमन् !

'इन्दिरा' पढ़कर मेरे हृदयक्षेत्रमें उत्साह
 बलवान् बीज आपने बो दिया था, यह ग्र
ीका प्रथम फल है। अतएव यह आपकोही
मर्पित है।

रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय

प्रस्तुत पुस्तक इसी नामकी श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय, बी० ए०, बारिष्टर की बँगला-पुस्तक का हिन्दी-रूपान्तर है। पुस्तकका विषय बतानेकी आवश्यकताही नहीं, पुस्तकका नामही विषयका परिचायक है। यह उपन्यास उतना घटना-पूर्ण नहीं जितना मनोरञ्जक है। लेखकने मधुर और सरल भाषामें बोलचालका बड़ाही सुन्दर स्वाभाविक चित्र चित्रित कर मर्मस्पर्शिनी मीठी चुटकियाँ ली हैं। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते हृदय-तन्त्रीके सूक्ष्मसे सूक्ष्म तार एकाएक झनझना उठते हैं। मैंने मूल पुस्तकके भावोंको अविकल रखने, उनकी स्वाभाविकता ज़रा भी नष्ट न करनेकी भरपूर चेष्टा की है और एक 'नंगे सिर' महाशयकी अनुग्रह-पूर्ण सहायतासे मैं यह कहनेका साहस भी कर सकता हूँ कि मुझे इस चेष्टामें बहुत कुछ सफलताभी प्राप्त हुई है। पूरी आशा है कि इस पुस्तक के पढ़ने से पाठकोंका चित्तविनोद अवश्य होगा।

इन्दौर,
दीपावली १८७५ । } रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय

पहला परिच्छेद।

गौरचन्द्रिका।

याली नदीने जिस जगह सुन्दर वनमें प्रवेश किया
है, उसके तीन कोस उत्तर विशालाची नामका
एक गाँव है। गाँव पियाली नदीकेही पूर्व तटपर
नदीसे विशालाची देवीके मन्दिरका केवल शिखरही
देता है। वटहपुञ्ज झाऊ, जिन और आमके सघन
घिरा है। नदी बहुत छोटी नहीं है। उत्तरमें
ी और दक्षिणमें मातला नामकी नदियाँ उसमें मिलती
के वक्षके ऊपर बड़ी-बड़ी नौकायें चलती हैं और
रा सुन्दरवनसे तरह-तरहकी लकड़ियाँ कलकत्ते
। कलकत्तेसे पोर्ट कैनिङ्ग जानेके लिये रेलवे कम्प-

मौने विशालाचीसे तीन कोस उत्तरको ओर पियालीपर पुल बाँधा है।

विशालाचीके वन्द्योपाध्याय वंश-परम्पराके ज़मींदार हैं; किन्तु इस वंशमें एक बड़ी बदनामी है। उन लोगोंकी वंश-तालिकाकी खोज करने पर उसमें शायद पूर्वकालके दो-एक डकैतोंका नाम पाया जाता है। कहा जाता है, सौ वर्ष से अधिक हुए, कम्पनीका एक फ़ौजदार वहाँके ज़मींदारको पकड़ने आया था। उस ज़मींदारने शायद फ़ौजदारको बाँध कर देवी विशालाचीके समच नरबलि दे दी; किन्तु बाबू लोग आजकल ये सब बातें क़बूल नहीं करते। वे कहते हैं, जाति-विरोधके कारण, सोनापुरके बाबूलोगोंने झूठमूठको यह बदनामी फैला दी है।

इस वंशके वर्त्तमान वंशधर श्रीयुत कान्तिचन्द्र वन्द्योपाध्याय हैं। सुन्दरवनका एक प्रकाण्ड अंश इनकेही अधिकारमें है। ज़मींदारीमें कान्तिचन्द्रका दोर्दण्ड प्रताप है। प्रजा-शासनमें इनके जोड़का कोई नहीं—ऐसा कहना अत्युक्ति न होगा। इस समयके ज़मींदारोंकी तरह ये बाक़ी मालगुज़ारीके लिए रैयतके नाम अदालतमें नालिश नहीं करते, मज़कूरी भेजकर रैयतको पकड़ मँगाते, नीमके पेड़में बँधवा देते और कोड़े मार-मार कर मालगुज़ारी वसूल कर लेते हैं। दुःख पायी हुई रैयत सरकारी अदालतकी शरण क्यों नहीं लेती? किसी-किसीने ली भी है। उनके घरोंमें इस समय चूहे,

गोहरा, चमगीदड़ आदि विचरण करते हैं। पहले इस ज़मींदारोके अधीन वेतनभोगी ग्वाले लठैत खुल्लमखुला रहते थे। अङ्गरेज़ोंके सुशासनके आगे वे अब रह नहीं सकते। इसलिये खुले तौरसे नहीं, छिपे तौरसे, रहते हैं और गिनतीमें भी अब बहुत थोड़े हैं।

विशालाक्षीके मध्यमें कान्तिचन्द्रका बहुत बड़ा मकान है। फाटकपर सुचित्रित नौबतखाना है। फाटकके बाद दोनो ओर फलफूलके बाग़ हैं। वहाँ नाना प्रकारके पालित पक्षी घूमते हैं। कुछ दूर दक्षिणमें सङ्गमरमरसे बँधा हुआ स्वच्छ सरोवर है। वहाँ दो बेञ्चें पड़ी हैं। बाँई ओर कचहरीकी इमारत है। उसके पिछवाड़ेसे ज़नानखानेका आरम्भ होता है।

वैशाखका महीना और दोपहरका समय है। आज बड़ी गरमी पड़ रही है। मालूम होता है, मानों ज्येष्ठ-आषाढ़का दिन है। अन्त:पुरके बाहरी भागमें, तहखानेके एक एकान्त कमरेमें, कान्तिचन्द्र विश्राम कर रहे हैं। हरिचरण कैवर्त बाहर बैठकर पङ्खा खींच रहा है। कमरेका भीतरी भाग बहुत अच्छा सजा हुआ है। कलकत्तेसे अङ्गरेज़ कन्ट्राक्टर आकर दीवार पर रङ्ग कर गया है। दीवार पर कुछ देशी और विलायती चित्र टङ्गे हैं। सामनेकी खिड़कीसे धूप आकर "छिन्नमस्ता" की छविपर पड़ती है,—उससे देवीकी रक्तधारा अग्निधाराकी तरह दिखाई देती है। कपाटके ऊपरी

हिस्से में ब्राकेटपर मर्मरकी बनी हुई एक नारीमूर्त्ति खड़ी है। उसकी भुजाके नीचे एक गोली दीवार-घड़ी टिक-टिक कर रही है। फ़र्श पर साफ़ बिछावन बिछा है। उस पर दूधकी तरह सफ़ेद गिलाफ़वाले तकिये रखे हैं। एक तकिये के सहारे लेटे हुए कान्तिचन्द्र अर्द्धमुद्रित नेत्रसे धूम्रपान कर रहे हैं।

अवस्था उनकी पचास वर्षकी होगी। शरीर तेजस्वी, गौरवर्ण, दीर्घ और बलिष्ठ है। आँखें दोनों बड़ी-बड़ी और गोली हैं। डाढ़ी-मूछें भरी हुई हैं। ललाटपर झुर्रियाँ पड़ी हैं। मालूम होता है, जीवनमें इनको अनेक चिन्ताएँ—शायद दुश्चिन्ता भी—करनी पड़ी हैं। वे सुनहरी मुँहनालकी तर्जनी और मध्यमाके सहारे होंठके पास पकड़े हुए हैं। कुछ दूरपर चाँदीकी गुड़गुड़ी दिल्लीकी कारीगरीका परिचय दे रही है। उसके नलपर कलाबत्तूका काम है। काशीकी बनी हुई सुन्दर चिलम पर चाँदीका झूमकादार सरपोश है। उसके ऊपरके छेदोंसे धीरे-धीरे धुआँ निकल रहा है।

भीतर-बाहर कहीं भी मनुष्यका स्वर सुनाई नहीं देता। पङ्खा खींचनेकी धीमी आवाज़, घड़ीकी टिक-टिक ध्वनि और हुक्केकी अस्फुट काकली मानों कमरेकी वायुमें आलस्य ढाले देती है। कहीं, दूर वनसे एक फ़ाख़्ते (Dove) की करुण तान खुली खिड़कीसे उस वायुमें नृत्यसी करती हुई भीतर पहुँच रही है।

गुड़गुड़ीका शब्द क्रम-क्रमसे क्षीण होने लगा। क्षीण होते-होते बन्द हो गया। उसकी जगह नाक बजनेका उपक्रम हुआ। मुखकी नली भी इस सुयोगमें बाबूके हाथसे मुक्ति पाकर बिछौनेपर लेट गई। उसकी भी इच्छा थी कि कुछ विश्राम लें; किन्तु ठीक इसी समय घड़ी बज उठी। पहले—कुर् र् र्—फिर रिनि-रिनि झिन्-झिन्—रिनि-टिनि झिन्-झिन्। पहाड़ी स्विटज़रलैण्डके किसी गाँवमें एक दिन यह स्वर घड़ीके प्राण में बाँधा गया था। सजल वङ्गदेशके घरमें, दण्ड-दण्डमें, एक बार उसकीही स्मृति प्रवासी घड़ीको शब्दायमान करती है। शब्द टं टं टं टं कर शेष हुआ। इसी शब्दसे कान्तिचन्द्रकी आखें खुल गईं। वे आखें मलकर उठ बैठे। नलीको मुँहमें लेकर घड़ीकी ओर दृष्टि फेरी, देखा, चार बज गये हैं। आवाज़ दी, "कोई है?"

हरिचरण कैवर्तने बाहरसे जवाब दिया—"धर्म्मावतार।" यह कहकर पङ्खेकी डोरी रख, जल्दीसे किवाड़ खोल, नीचा सिर किये भीतर आ खड़ा हुआ।

कान्तिचन्द्रने उसकी ओर न देखकर कहा—

"बाहर कौन है?"

"हुज़ूर, भोला है।"

"रामसिंहको भेज दे।"

"जो हुकुम धर्मावतार"—कहकर हरिचरण बाहर आया। भोलाको हुक्म सुना कर पङ्खा खींचने लगा।

कान्तिचन्द्र अब बिछौनेसे उठ खड़े हुए। नङ्गे पाँव कमरेमें इधर-उधर टहलने लगे। एक खिड़कीके पास खड़े होकर बाहरके नारियलके पेड़के पत्तोंका धीरे-धीरे डोलना देखने लगे। उसी पेड़की एक डाल पर एक चील्ह बैठी थी। वह कान्तिचन्द्रको अपनीही ओर तीव्र दृष्टिसे ताकते जान, डर से चिल्लाकर उड़ गयी।

रामसिंह आकर और प्रणामकर खड़ा हुआ। वह लम्बी-चौड़ी डीलका पश्चिमी जवान था। रामसिंह कभी प्रहरीका काम करता था, कभी बाबूके देहरक्षकके सम्मानित पदपर दिखाई देता था।

रामसिंहको देखकर कान्तिचन्द्रने पूछा—"छोटे बाबू कहाँ हैं?"

रामसिंहने कहा—"धर्मावतार, छोटे बाबू तो नौ बजेही नाव लेकर शिकार खेलने गये हैं।"

"साथमें बरकन्दाज़ कौन-कौन गये हैं?"

"हुज़ूर, गुलामअली, फ़ौजदारसिंह और भगवान तिवारी गये हैं।"

"हूँ" कहकर कान्तिचन्द्र क्षण-भर, मालूम नहीं क्या, सोचते रहे। रामसिंह हुक्मकी आशामें सिर नीचा किये खड़ा रहा।

अनन्तर बाबूने कहा—"रायजीको तलब कर।" "जो हुक्म हुज़ूर" कह और प्रणाम कर रामसिंह चला गया।

दूसरा परिच्छेद।

वैवाहिक।

कान्तिचन्द्र जूता पहन तहखानेसे बाहर हुए। हरिचरण उनके सिरपर छाता चढ़ा साथ-साथ चला। मार्गमें आश्रितजन मिलने लगे; वे सब आदरपूर्वक प्रणाम कर एक बगल खड़े हो गये।

बाबू बड़े दालानमें आ पहुँचे। दालानके एक कोनेमें परिवारमें रहनेवाली दो बालिकायें बैठी खेल रही थीं। कान्तिचन्द्रको देखतेही उन्होंने खेलना बन्द कर दिया। उठकर दबे पाँव डरी हुईसी भाग गईं।

कान्तिचन्द्र धीरे-धीरे सीढ़ी चढ़कर ऊपर पहुँचे। नौकर पान और तम्बाकू दे गया। बाबू बैठकर और मुँहमें एक पान रखकर रायजीकी प्रतीक्षा करने लगे।

रायजी उर्फ़ सीतानाथराय बाबूके बाल्यसखा हैं। ज़मींदारीके काममें वे उनके दाहिने हाथ हैं। वे इस क्षुद्र विशालाक्षी राज्यके मन्त्री हैं। वे जातिके ब्राह्मण हैं। षड्यन्त्रविद्यामें सिद्धहस्त हैं। इस समय एक ख़ास सलाहके लियेही बाबूको उनकी आवश्यकता है।

कान्तिचन्द्र अपने एक मात्र पुत्र और वंशधरकी चालढाल के लिये चिन्तित हैं। सोचते हैं, कलकत्ते में रखकर अङ्गरेज़ मास्टर नियुक्त करनेमें भूल हुई। अङ्गरेज़के संसर्गमें रहनेसे उसका मिज़ाज अँगरेज़ी हो गया है। वे उसके शिकारके अनुरागके लिये नहीं सोचते। शिकारका नशा तो उनके वंशमें वंशपरम्परासे चला आता है। पर वे कभी भी इस नशेसे बहुत मतवाले नहीं हुए; किन्तु उनके पिता और चचे खूब शिकारप्रिय थे। उनके मँझले चचा तो थोड़ी उमरमेंही कई बार भाग्यसे बाघके मुँहसे बच आये हैं, ऐसा सुना जाता है. उसे वे गिनते नहीं। हाँ, आजकल समयही ऐसा उपस्थित है कि किसी दिन सुनेंगे कि छोकरा ब्राह्म हो गया है, नहीं तो ईसाई हो गया है।

कान्तिचन्द्रके दुर्भावना-स्रोतमें बाधा पड़ी। सीतानाथ रायका शुभागमन हुआ। जो मनुष्य आकर खड़ा हुआ, उसका आकार छोटा, शरीर मोटा, वर्ण बहुत काला, मुखमण्डल केशलेशहीन और मस्तकका सम्मुख भाग भी उसी तरहका है। रायजीके दोनों पावोंमें एक पाँव बड़ा और एक छोटा है। इसीलिये वे ज़रा अँढुक-अँढुक कर चलते हैं। वे संस्कृतज्ञ मशहूर हैं। बातचीतमें शिष्ट भाषाका अधिक व्यवहार करते है। गृहमें प्रवेश करतेही अपने आगमनके संवादरूपमें उन्होंने कहा—

"आः—आज तो अँगारे बरस रहे हैं।"

कान्तिचन्द्र दूसरी ओर मुँह किये थे। उन्होंने घूमकर और सीतानाथ रायकी बातपर मुसकराकर कहा—

"गरमीका क्या कहना! खानेके बाद विश्राम की चेष्टा की,—पर ज़रा भी नींद नहीं आई।"

सीतानाथने कहा—"चेष्टा मैंने भी की थी। मैं भी कृत-कार्य न हो सका। "यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः?" कह हा-हाकर हँसने लगे। हँसी रुकनेके साथही-साथ कहा—"आज तो असमयमें स्मरण किया है, दादा?"

कान्तिचन्द्रने कहा—"बैठो, बहुतसी बातें करनी हैं।" सीताराय बैठ गये।

बाबूने कहा—"सूर्यपुरकी उसी संबन्धकी बात सोचता हूँ।"

सीतारायने सामने रक्खे हुए पानके डिब्बेसे एक पान लेकर, अँगुलियोंमें घुमाते-घुमाते कहा—"क्या स्थिर किया है?"

"स्थिर अब तक भी कुछ नहीं किया। सोचता हूँ, क्या जवाब दूँ।"

"यदि मेरी सलाह चाहते हो तो स्थिर कर लो। हरिहर चट्टोपाध्यायके वही एक लड़की है। अगाध सम्पत्ति है, अन्तमें वह तुम्हारेही घर आवेगी।"

कान्तिचन्द्रका भी यही विश्वास है। तथापि पूछा—

मेरे घर कैसे आवेगी ? हरिहर चट्टोपाध्याय क्या गोद न लेंगे ?"

सीतारामने कहा—"इस विषयमें निश्चिन्त रहो। मैंने इस बातका अच्छी तरह पता लगा लिया है। वे गोद नहीं लेंगे। हरिहर चट्टोपाध्याय हिन्दू-कालेजके छात्र थे। मिज़ाज अँगरेजी है। कहते हैं, मेरी जो सम्पत्ति है, उसका उपभोग मेरी लड़की और दामाद करेंगे, पराये लड़केको लाकर क्यों देने जाऊँगा ?"

कान्तिचन्द्रने कहा—"हाँ, यह बात मैंने भी सुनी है, किन्तु जो देते हैं, उससे कैसे राज़ी हो जाऊँ ? यदि मुझको सुन्दरवनकी अपनी ज़मींदारीके अंशको पणस्वरूप लिखा-पढ़ी कर दें तो उनके यहाँ छोकरीका विवाह कर सकता हूँ।"

सीतानाथ कुछ सोचकर बोले—"जो कहते हो वह ठीक-ही है, किन्तु एक यह बात है कि अधिक खींचातानीसे कहीं बनी-बनायी बात बिगड़ न जाय। सुन्दरवनकी भी ज़मींदारी आज नहीं तो कल तुम्हारीही होगी।"

कान्तिचन्द्रने उत्तेजित होकर कहा—"कल नहीं, मैं आज-ही चाहता हूँ, मेरी ज़मींदारीके पासही वह ज़मींदारी है। उसके ऊपरही मेरा अधिक लक्ष्य है। नहीं तो रुपया वा गहना चाहे पाँच हज़ारका दे या दस हज़ारका, इसकी मुझे परवाह नहीं। इसको मैं जलकी मछली नहीं रखना चाहता। किनारे लाना चाहता हूँ।"

"एक दिन तो आयेगीही।"

"कौन कहता है, एक दिन आयेगीही? मानता हूँ, गोद नहीं लेंगे। मानता हूँ, उनकी स्त्रीके और सन्तान होने की सम्भावना नहीं। किन्तु इनके अतिरिक्त क्या और कोई आशङ्का नहीं? क्या और कुछ तुम्हें नहीं सूझता?"

सीतानाथ अच्छी तरह जानते थे, किन्तु बाबूकी अपेक्षा अपनेको कभी-कभी अल्पबुद्धिमान् दिखाकर खुशामद करना उनका उद्देश्य है। इसलिये उन्होंने कहा—"नहीं, और तो कुछ देखता नहीं।"

बाबूने कहा—"देखते नहीं? अच्छा, हरिहर चट्टोपाध्याय की अवस्था क्या है?"

"युवावस्था है,—मैं समझता हूँ, तुम्हारी इतनी अवस्था होगी।"

"उनकी स्त्रीकी यदि आज मृत्यु हो जाय तो कल क्या वे विवाह न करेंगे?"

सीतानाथने तब मुखपर कुछ विस्मयका भाव ला, सिर हिला कर कहा—"हाँ, हाँ, यह बात तो मेरे दिमाग़में आईही नहीं।"

कान्तिचन्द्र ठगे गये। इस झूठी खुशामदमें भूल गये। कुछ गर्वित भावसे जल्दी-जल्दी धूम्रपान करने लगे। सीतानाथने थोड़ी देर बाद कहा—"तो यदि कहो तो मैं स्वयं सूर्यपुर जाकर बातचीत करूँ।"

कान्तिचन्द्रने कहा—"अच्छा तो है, दो हज़ार रुपया दक्षिणा पाओगे।" कहकर हँसने लगे।

सीताराय मन-ही-मन हिसाब करने लगे—'दो हजार,—और उस ओरसे भी दो हज़ार क्यों नहीं? चार हज़ार।"

कान्तिचन्द्रने और एक पान मुँहमें रखकर कहा—"अच्छा, सूर्यपुरके वे लोग कैसे कुलीन हैं? हमलोगोंमें तो आगे कभी भी सम्बन्ध नहीं हुआ।"

सीतानाथने कहा—"सूर्यपुर के लोग लक्ष्मीपाशाकेही कुलीन हैं। उनका आदिवास तुम्हारे लक्ष्मीपाशामेंही तो था। लक्ष्मीपाशाके कुलीनोंका इतिहास जानते तो हो?

"वे लोग रामानन्द चक्रवर्त्तीकी सन्तान हैं न?"

"हाँ, रामानन्द चक्रवर्त्ती बाकरगञ्ज ज़िलेके सरमङ्गल गाँवसे अपना वरदार उठा लाये। बल्कि, यों कहना चाहिये कि अपने कुलकी मर्यादा बचानेके लिये एक प्रकारसे भाग आये। उसके बाद लक्ष्मीपाशाके निकटसे होकर—क्या नाम गाँवका?" —कह सीतानाथ माथा नीचा कर, आँखें मूँद, मुँह सिकोड़ चिन्ता करने लगे। उनके बायें हाथकी तर्जनी हालकी पकड़ी हुई मछुर मक्खी की तरह हिलने लगी। याद आतेही कहा—"हाँ, धोपादह। धोपादह आकर उन्होंने बहुत अनुरोध करने पर मजूमदारकी बेटीसे विवाह किया। मजूमदारकी बेटीसे विवाह करनेसे कुलगर्व किञ्चित् खर्व तो

ज़रूरही हुआ, किन्तु तब भी मेरे हाथी का मोल लाख रुपया है भाई, लाख रुपया—समझे या नहीं। यहींसे लक्ष्मीपाशाके कुलीनोंकी उत्पत्ति हुई। इस विषयमें सूर्यपुरके चट्टोपाध्यायोंको कोई हटा न सकेगा।"

कान्तिचन्द्रने कुछ अन्यमनस्क होकर कहा—"हूँ। नबूका विवाह दो एक महीनेमेंही कर देना निश्चय किया है। उमर हो गई है, और विलम्ब करना ठीक नहीं।"

सीतानाथने हँसते-हँसते कहा—"तो पोतेका मुँह देखने की इच्छा हुई है—छोकरेका विवाह कर दो। परन्तु उमर हो गई है, ऐसा मत कहो! बीस वर्ष की उमर कोई उमर है? बालकही तो है।"

गुड़गुड़ीकी नली मुँहसे हटा और सीतानाथके हाथमें देकर कान्तिचन्द्रने कहा—"नहीं, नहीं, यह बात नहीं है। दो-एक विषयमें मुझे कुछ चिन्ता हुई है। लड़केकी चाल-ढाल कैसी अङ्गरेज़ी हो गयी है, देखते नहीं?"

सीतानाथने कहा—"इसके लिये चिन्ता मत करो, उसमें आशङ्का का कोई कारण नहीं। इस समय अवस्था-दोषसे प्रकृति कुछ उच्छृङ्खल है। इस उमरकी अपनीही बातें सोच देखो न।" यह कह, कान्तिचन्द्रकी ओर मतलब-भरी दृष्टि कर, सीतानाथ मुसकराने लगे।

कान्तिचन्द्रने कहा—"मेरी क्या सलाह है, जानते हो? अब और उसे कलकत्ते न भेजूँगा। लिखना-पढ़ना जो कुछ

सीख लिया है, वह काम चलानेके लिये यथेष्ट है। अङ्गरेजी बोल सकता है। उस दिन मैजिष्ट्रेट साहब उससे बातें कर कितने प्रसन्न हुए। मुझसे कहा—'बाबू तुम्हारा लड़का अङ्गरेज़ों जैसी अँगरेज़ी बोलता है।' अब उसको घरमें रखकर ज़मीन्दारी-सम्बन्धी काम-काज की कुछ शिक्षा देनेकी मेरी इच्छा है। इसीसे एक सयानी लड़की ढूँढ़ता हूँ।"

सीतानाथने कहा—"वाह! बच्चू के लिये जो फन्दा तैयार करते हो, वह, देखता हूँ, सांघातिक है। तुम कहते हो कि उसकी चाल-ढाल अँगरेज़ी होगई है, ऐसी दशामें वह विवाह करनेके लिये राज़ी होगा? आजकलके छोकरे, सुनता हूँ, अपने इच्छानुकूल विवाह करना चाहते हैं।"

कान्तिचन्द्रने कुछ अवज्ञापूर्ण मन्द हँसी हँस कर कहा—"कान्तिवन्द्योपाध्यायकी इच्छाके अनुरूप काम न हो—ऐसा कभी सुना है?" यह कह शतरञ्जकी पिटी खींच इशारेसे सीता नाथको भी अपनी सैन्यरचना करनेके लिये कह कर खेलने बैठे।

कान्तिवन्द्योपाध्यायने यह नहीं सोचा कि इस विषयमें जिसकी प्रतिकूलता की आशङ्का है, वह उन्हींका लड़का है। "पत्थर पर पत्थर घिसनेसेही आग निकलती है।"

तीसरा परिच्छेद।

मातापुत्र।

कान्तिचन्द्रकी सहधर्मिणीका नाम श्रीमती कमलादेवी है। कमलादेवीके पिता, स्वर्गीय निधिराम भट्टाचार्य्य बहुत धनवान् थे। उनकी मृत्यु हुए दस वर्ष हो चुके। उनके वसीयतनामे के अनुसार उनके धनसे कमलादेवीको यावज्जीवनके लिये दो सौ रुपये महीनेकी वृत्ति मिलती आती है। पिताके परलोक जानेके बाद कमलादेवीके भाइयोंने धन के लिये आपसमें बड़ा झगड़ा उभाड़ा था, किन्तु उस समय यदि कान्तिचन्द्र मध्यस्थ होकर बुद्धि-बलसे सब झगड़ा मिटा न देते, तो अबतक उनकी धन-दौलत सब स्वाहा होगई होती, इसमें कोई सन्देह नहीं।

कमलादेवीकी अवस्था इस समय चालीस वर्ष की है। पहले इनकी गणना परम सुन्दरियोंमें थी। सब कहते थे—कमला तो साक्षात् कमला है, नाम सार्थकही हुआ है। उस सुन्दरता का चिन्ह अब भी कमलादेवी के अवयवोंमें विद्यमान है;—इस समय भी यदि कमलादेवी स्थूल होनेसे मुँह

मोड़ कर, कुछ चीण होनेकी ओर ध्यान दें तो अब भी कुछ वर्षों तक उनकी सुन्दरता की ख्याति अटूट रहे। उनकी आंखोंकी बड़ी ख्याति थी। हरिणियोंकी तरह वे बड़ी-बड़ी आँखें इस समय बहुत छोटी होगई हैं, अधिकांश गहने तुड़ा-कर फिर गढ़ाने पड़े हैं।

विवाह होनेके लगभग एक सालके बाद कमलादेवीके एक कन्या पैदा हुई थी। वह तीन साल की होकर माता की गोद खाली कर गई। पाँच वर्षों तक फिर कोई लड़का या लड़की न हुई। परिवारकी सयानी बूढ़ियाँ चिन्तित हो पड़ीं। अनेक साधु-संन्यासियोंकी औषधि धारण करने पर, देव-देवीकी पूजा करने पर नवगोपालका जन्म हुआ। इसी कारण नवगोपालका बड़ा आदर है। नवगोपालके बाद भी दो कन्यायें पैदा हुई हैं। उनका लालन-पालन कमलादेवी की विधवा ननद करती हैं। वे स्वयं नवगोपालमेंही व्यस्त रहती हैं।

दिनके नौ बज चुके हैं। पूजाके दालानमें कमलादेवी पूजा करने बैठी हैं। असलमें यह एक कमरा है, किन्तु इसका नाम 'पूजाका दालान' हो गया है। यह अन्त:पुर का एकान्त पूजास्थान है। गृह-देवता यहाँ नहीं रहते। उनका मन्दिर अन्त:पुरके बाहर है। वेतनभोगी पुजारी लोग वहाँ बड़े आडम्बरके साथ उनकी पूजा-आरती नित्य करते हैं। दालान न होने पर भी कमरा बड़ा है। कान्तिचन्द्रकी धन-

बत्ताकी स्वर्णछटा इस कमरेमें भी झलक मारती है। फर्श काले और सफ़ेद रङ्गके मर्मर पत्थर का है। कमरेका अधिकांश स्थानही ख़ाली है। एक कोनेमें पूजाका आयोजन है। मेहगनीकाष्ठकी बनी हुई एक बड़ी चौकी रखी है, जिस पर हाथीदाँतका काम है। उसके ऊपर चाँदीके एक सुन्दर सिंहासनके मध्यमें कमख्वाब बिछा हुआ है और उस पर रामसीताकी स्वर्णमूर्त्ति विराजती है। उनके पीछे दो छोटे-छोटे कमख्वाबके तकिये रक्खे हैं। उनकी झालरोंमें मोती पुते है। सिंहासनके नीचे, चौकीके आस-पास, पूजाकी नाना प्रकारकी सामग्रियाँ रक्खी हैं। दो शङ्ख हैं—एक छोटा, एक बड़ा; सफ़ेद और लाल चन्दनके कई खण्ड हैं, दोनों ओर दो चमर हैं; इत्यादि। एक जगह बहुतसी पुस्तकें एक दूसरे के ऊपर रक्खी हैं। सिन्दूर और चन्दनसे उनका बाहरी भाग प्राय: ढका है।

एक कोमल मृगचर्म पर कमलादेवी बैठी हैं। सामने की गंगाजल-भरा एक पंचपात्र, दो चन्दनपात्र और चाँदीके एक बड़े थालमें पुष्पराशि रक्खी है। छोटी-छोटी रकाबियोंमें नैवेद्यकी विविध सामग्री रक्खी है। एक कटोरेमें मधुभरा मधुपर्क है। सुवर्णके एक दियेमें घी की बत्ती टिमटिमा रही है। धूप और धूनी का धुआँ थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठ रहा है। कमरा सुगन्धसे महमह होरहा है— चम्पे की सुगन्धने सब सुगन्धोंकी दबाकर अपना अधिकार जमा लिया है।

कमलादेवीका शरीर एक शरद्की साड़ीसे शोभित है। साड़ी के लाल कोरसे उनका गला घिरा है। पानीसे भोगे हुए केश पीठके कपड़े पर पड़े हैं। केशगुच्छके छोरमें एक छोटीसी गाँठ लगी है। कारण, बिल्कुल केश खोलकर पूजा आदि नहीं करनी चाहिये। उनके गलेमें चिक, ऊपर हाथमें जोशन और कलाईमें चूड़ी पड़ी है। इनके अतिरिक्त इस समय और कोई गहना उनकी देहमें दिखाई नहीं देता।

कमलादेवीकी अधिकांश पूजा हो चुकी है। शिवपूजा अभी बाक़ी है। मालूम होता है, आद्यास्तोत्र, नवग्रहोंको प्रणाम करना और श्रीकृष्णके एक सौ आठ नाम जपना भी बाक़ी है। वे शिवपूजाकी तैयारी कर रही थीं, इसी समय बाहर से पुत्रका कण्ठस्वर सुनाई पड़ा।

"माँ—माँ।"

"क्यों ? बेटा।"

"माँ, तुम कहाँ हो ?"

"बेटा, पूजाके दालानमें हूँ।"

इतनी बातें होते-होते नवगोपाल खुले द्वारपर आ उपस्थित हुआ। कमरेमें पाँव रख सङ्कोचसे फिर लौट गया और बाहर स्लीपर उतार कर नंगे पाँव कमरेके भीतर उसने प्रवेश किया।

नवगोपालकी अवस्था बीस वर्षकी है। शरीर सुन्दर,

रमासुन्दरी

माता-पुत्र ।

NARSINGH PRESS, CALCUTTA.

सुगठित और बलिष्ठ है। सिरके बाल कुछ बड़े हैं और इस समय बिखरे हुए हैं। छाती खुली है। सूक्ष्म शुभ्र यज्ञोपवीत गौरवर्ण देहपर बहुत सुन्दर दिखाई देता है। दोनों आँखें आनंदसे चमक रही हैं। वह आतेही एक आसन खींचकर माँ के निकट बैठ गया। बैठतेही कहा—"माँ! तुमको छू दूँ?"

माँने कहा—"नहीं, छूना नहीं, तुमने अभी कलका कपड़ा भी नहीं बदला है। मेरी पूजा अभी पूरी नहीं हुई है।"

उसने कहा—"नहीं, तुमको छू दूँगा।" यह कहकर और दोनों हाथ फैला कर माताके अङ्गोंके बहुत पास लेगया।

कमलादेवीने आसनमें संकुचित होकर कहा—"दुष्टता क्यों करता है? यदि छूनाही है तो जा, रेशमी वस्त्र पहन आ।"

नवगोपालने कहा—"अच्छा।" कहकर चला गया और कुछ क्षणमेंही एक मयूरकंठी रेशमी वस्त्र पहन कर आ पहुँचा और आसन पर बैठ कर कहा—"अब छू दूँ?"

माँने कहा—"ठहर, ठहर, पहले गंगाजलसे हाथ धो। मालूम नहीं, हाथ कैसे हैं।"

नवगोपालने हाथ फैलाया। माँने पञ्चपात्रसे गंगाजल लेकर उसके हाथमें दिया और अँगुलियोंसे थोड़ा गङ्गाजल उसके सर्वांगमें छिड़क दिया। शीतल जलकणोंसे नव-

गोपालका शरीर काँप उठा। माँने कहा—"कह, गङ्गा, गङ्गा, गङ्गा।"

नवगोपालने कहा—"गङ्गा, गङ्गा।"

"तीन बार कह—गङ्गा, गङ्गा, गङ्गा।"

नवगोपालने कहा—"गङ्गा, गङ्गा, गङ्गा।" और यह कहते-कहते दोनों हाथोंसे माँ को छू लिया।

कमलादेवीने स्नेहभावसे उसके मस्तकपर हाथ रक्खा और बिखरे हुए बालोंको सँवारते-सँवारते कहा—

"संध्या करना क्या एकबारगीही छोड़ दिया?"

रामगोपालने कहा—"जो सवेरा करते हैं, वही 'संध्या' करेंगे। मैं संध्या करनेवाला कौन, माँ?"

माँने कहा—"वाह, क्या कहना! खाली बातें बनाना-ही सीखा है। जब नया-नया उपनयन हुआ था, उस समय संध्या करने की धूम कोई देखता! केवल संध्याही नहीं—नारायणपूजा, शिवपूजा और कितनीही पूजा करता था। एक साल बीतते-बीतते सब ठण्ढा होगया।"

नवगोपालने सिर हिलाकर कहा—"एक साल किया है, और क्या माँ?'

"एक सालही करनेसे होगया? ब्राह्मणके लड़केको रोज़ संध्या करनी चाहिये।"

नवगोपालने कहा—"देखो माँ, रोज़-रोज़ संध्या करनेका अब कोई प्रयोजन नहीं। अगले ज़मानेमें जब लिखनेकी सृष्टि

नहीं हुई थी—वेद, पुराण, मन्त्र, तन्त्र ब्राह्मणोंके मुँहमें वास करते थे, तब मुनि-ऋषि रोज़-रोज़ संध्यावन्दनाकी आवृत्ति करते थे। इसका एकमात्र यही कारण था कि कालान्तरमें कहीं भूल न जायँ। अब छापेकी पुस्तकें होगई हैं—छपी पुस्तकोंमें संध्या लिखी हुई है, भूल जानेसे कोई हानि नहीं। अब रोज़ दोनों वक्त संध्या करना वृथा समय नष्ट करना है।"

माँने कहा—"जा, जा, व्यर्थकी बातें मत कर। बड़ा पुखी बना है! नियमित संध्या करनेसे शरीर अच्छा रहता है, क्या यह जानता है?"

यह सुन नवगोपाल हा-हा कर हँसने लगा। कहा—"माँ, शास्त्रकी वैज्ञानिक व्याख्या, खानिके तिमिर गर्भमें, इस विशालाक्षी ग्राम तक भी पहुँच गई है? मैं समझता था, शहरोंहीमें इसका प्रादुर्भाव है।"

माँने कहा—"जिसके मनमें धर्म-कर्म होता है, निष्ठा होती है, उसका स्वास्थ्य अच्छा रहता है, चाहे शहर हो चाहे गाँव। शास्त्र सब जगहमेंही शास्त्र है।"

खिड़कीसे थोड़ी-थोड़ी हवा आरही थी। उस हवासे कमरेके बीचमें ऊपर टङ्गा फ़ानूसका झाड़ धीरे-धीरे हिल रहा था। फ़ानूसोंके परस्पर स्पर्शसे टन-टन का मीठा स्वर उठ रहा था। नवगोपालने उसी हिलते हुए झाड़की ओर ज़रा देख, सोच कर कहा—

"माँ, स्कूलके पण्डित हारु चक्रवर्त्ती को क्या खूब निष्ठा है?"

माँने उत्तेजित भावसे कहा—"निष्ठा नहीं? तीन बार संध्या-आह्निक बिना किये ब्राह्मण जलतक नहीं ग्रहण करते।"

सिर हिला-हिलाकर, मुसकराते-मुसकराते नवगोपालने कहा—"अच्छा, तो उनको महीनेमें एकबार जाड़ा देकर ज्वर क्यों आता है?"

माँने कहा—"ज्वर आता है,—मलेरिया ज्वर है, मनुष्यका क्या वश?"

नवगोपालने हाईकोर्ट जाकर वकीलोंकी वक्तृतायें सुनी थीं। कृत्रिम रोषके साथ ज़ोरसे आसन पर हाथ पटक कर नवगोपालने कहा—"मलेरिया ज्वर है या काला ज्वर, इस विषय पर तो बात नहीं होरही है। ज्वर आता क्यों है? कहती हो, दो बार संध्या-आह्निक करने से स्वास्थ्य अच्छा रहता है, तो हाराधन चक्रवर्त्तीको महीनेमें एकबार ज्वर क्यों आता है?"

कमलादेवी चुपचाप चन्दन घिसने लगीं।

"जवाब दो न, माँ—ज्वर आता क्यों है?"

माँने गुस्सा होकर कहा—"ज्वर आता क्यों है, जा, हारु चक्रवर्त्तीसेही पूछ।"

नवगोपाल तब विजयीकी तरह सिर हिलाने लगा। कुछ देर बाद बोला—"अच्छा माँ, मुझे ज्वर आता है ?"

माँने चन्दन घिसते-घिसते कहा—"जा,जा, बेशी चालाकी मत कर। बड़ा हट्टा-कट्टा है न! तालपत्रके सिपाहीकी तरह धक्का मारतेही गिर पड़े!"

नवगोपालने कहा—"माँ, पुत्रस्नेहमें अन्ध होकर सत्यका संहार न करो। वही परसों जङ्गलमें दो जङ्गली सुअर मार आया हूँ।"

माँने कहा—"बड़ा काम किया है।"

"मैं संध्या करूँ ? आह्निक करूँ ?—देखो, प्रमाणित हो गया है कि संध्या-आह्निक करनेसेही ज्वर आता है, न करनेसे-ही शरीर अच्छा रहता है। हार गई माँ, हार गई।"

माँने कहा—"जा, जा।" कह कर ज़ोर-ज़ोरसे चन्दन घिसने लगीं।

नवगोपालने देखा, माँ कुछ नाराज़ होगई हैं। कहा—"अच्छा माँ, जवाब तो दे सकी नहीं ? यदि मैं होता तो क्या जवाब देता, जानती हो ?"

"क्या जवाब देता ?"

"मैं होता तो कहता—लोग जो दुःख पाते हैं, या सुख भोग करते हैं, वह सब क्या अपनेही कर्मफलके अनुसार करते है ? कितनेही बाप-माँके पुण्यसे तर जाते हैं और कितने-ही पुण्यात्मा लोग बाप-माँके पापसे बहुत-बहुत ज्वराक्रान्त होते हैं—कुनैन खा मरते हैं।"

कमलादेवी पुत्रकी तीव्र बुद्धि देखकर प्रसन्न होगई। कहा—"मैंने तो तेरी तरह फीस देकर कालेजमें लिखना-पढ़ना सीखा नहीं!" कहकर कमलादेवी पुत्रकी ओर देखकर हँसने लगीं।

चौथा परिच्छेद।

अजीब जिद।

इतनी देरमें कमलादेवी को शिवपूजा का आयोजन पूरा हुआ। उन्होंने अब शिवपूजा में ध्यान दिया। नवगोपाल बैठा-बैठा शिवपूजा देखने लगा और धूपकी अग्नि में क्रम-क्रमसे धूप छोड़ने लगा।

माँने शिवका ध्यान आरम्भ कर कहा—"ध्यायेनित्यं महेशं"—

नवगोपालने कहा—"उँहुँ। ध्यायेनित्यं नहीं,—ध्यायेन्नित्यं, ध्यायेत् और नित्यं ध्यायेन्नित्यं।"

माँने कहा—"ध्यायेन्नित्यं? अच्छा। ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतनाशम्"—

नवगोपालने कहा—"नहीं, नहीं, 'वतनाशं' नहीं; चारु-चन्द्रावतंसं। अर्थात् चारुचन्द्र अवतंस, कहिये अलङ्कार, है जिसका।"

"वतंसं? अच्छा। चारुचन्द्रावतंसं रत्नकल्प जलं धं—'

नवगोपाल हँस पड़ा। कहा—"बिलकुल अशुद्ध कहती हो। जलंघ क्या? हा हा।"

"तब क्या?"

"रत्नकल्पोज्ज्वलाङ्गम्—उनका अङ्ग किस प्रकार उज्ज्वल है?—रत्नकल्प—यानी रत्न की तरह।"

"क्या कहा?"

"रत्नकल्पोज्ज्वलाङ्गम्।"

माँने कहा—"मुझसे ऐसा उच्चारण नहीं होता, बेटा! मैं स्त्री हूँ, इतना क्या जानूँ? जो शुरू से कहती आती हूँ, वही कहूँगी। दिक न कर।"

नवगोपाल जब घरमें रहता है तब कभी-कभी माँकी पूजा के समय पास आकर इसी तरह बैठता है; स्तवस्तोत्रादिका पाठ करते समय माँकी संस्कृत की भूलें पकड़नेमें उसे कुछ खास आनन्द होता है। माँ बिगड़ गई हैं, यह देखकर वह कुछ क्षण चुप रहा किन्तु और दो-एक स्थानों में संशोधन किये बिना न रह सका। कमलादेवी मुँहसे चाहें जो कुछ कहें, किन्तु उनका मातृहृदय पुत्रका असाधारण पाण्डित्य देखकर भर आया।

माँकी पूजा और स्तवादि पूर्ण होने पर नवगोपाल ने कहा—"देखो माँ, मुझे कुछ रुपया दे सकती हो?"

"क्यों, रुपया क्या करेगा?"

"चिड़ियाँ पालूँगा। चिड़ियाँ पालनेकी बड़ी इच्छा है।"

पूजाके सामान सामने से हटाते-हटाते कमलादेवी ने कहा—"अच्छा, लेना। कितना रुपया चाहिए?"

"यह तो इस वक्त जानता नहीं। जितना रुपया लगेगा उतना तुम दोगी तो?"

"चिड़ियाँ पालनेमें और कितने रुपये लगेंगे? दस नहीं तो बीस रुपये। तो लेना फिर।"

"अच्छा, तीन बार कहो—दूँगी, दूँगी, दूँगी।"

माँने हँसकर कहा—"बातों-बातोंमें तीन बार क्यों कहूँ? कहती हूँ दूँगी—तीन बार क्यों कहूँ?

उस समय नवगोपाल देह झाड़ कर सीधा होकर बैठा। कहा—"माँ, कहती हो कि दूँगी—अन्तमें कह न सकोगी कि न दूँगी। मैं किस तरह चिड़ियाँ पालूँगा, जानती हो? मालूम होता है, समझती होगी कि दो चार तोता या चन्दना* साधारण पींजरेमें पालूँगा।"

"नहीं तो और क्या?"

"ऐसा होता तो दस रुपयेमेंही हो जाता। इस तरह नहीं, माँ, इस तरह नहीं। मेरा मतलब यदि सुनोगी तो एकबारगी अवाक् हो जाओगी।"

इसी समय एक दासीने आकर कहा—"दादा बाबू, आपका जलपान तैयार है।" कह कर दासी चली गई।

कमलादेवीने कहा—"क्या मतलब है, कह न।"

* एक प्रकार की चिड़िया।

नवगोपाल कहने लगा—"मैं दो-चार नहीं, बहुतसी चिड़ियाँ पालूँगा और उनको साधारण पिंजरेमें बन्द कर झुला न रक्खूँगा। पिंजरेमें चिड़ियों को बहुत कष्ट होता है। पहली बात तो यह है कि उनसे उड़ते नहीं बनता। पँख बँध जाते हैं। चिड़ियों के लिए उड़ना जो एक प्रधान आनन्द है, उसीसे वे वञ्चित हो जाती हैं। दूसरी बात यह है कि पिंजरेमें चिड़िये को रखना बड़ा अन्याय करना है। अकेले रहती है—बड़ा कष्ट होता है। इसीलिए सोचा है कि एक-एक पिंजरेमें एक-एक तरह की बहुतसी चिड़ियाँ रक्खूँगा। पिंजरा इतना बड़ा होगा कि चिड़ियाँ स्वच्छन्दतापूर्वक उसमें उड़-उड़ कर घूम-फिर सकेंगी। एक-एक पिञ्जरा कमसे कम इस घर की तरह बड़ा होगा।"

माँने कहा—"दुर पागल! घरकी तरह कहीं पिञ्जरा होता है? ऐसा तो कभी सुनाभी नहीं। इतना बड़ा पिञ्जरा टाँगेगा कहाँ?"

"टाँगूँगा कहाँ, यह उस समय देखोगी। उसमें सब पेड़ और पौधे होंगे। बड़े ऊँचे पेड़ नहीं। अच्छे-अच्छे फलोंके सब पेड़ रहेंगे। चिड़ियाँ अधिकतर यही सोचेंगी कि वे स्वतंत्र भावसेही रहती हैं।"

"उसमें दो चार नदियाँ नहीं होंगी? चिड़ियाँ जल किसका पीयेंगी?"—कहकर माँ हँसने लगी।

नवगोपालने कहा—"मा, हँसो नहीं। जब सब हो जा-

यगा तब देखना। पिञ्जरा कैसा होगा, कहता हूँ, सुनो। तार का जाल और क्या? बाग़में जहाँ फलके पेड़ हैं, ऐसी एक जगह देख कर तारके जालसे घेर-घेर कर पिञ्जरा तैयार करूँगा, समझ गई? मिट्टीही पिञ्जरे की फ़र्श होगी। चारों ओर खूँटी गाड़-गाड़ कर तार का जाल घेर दूँगा। छत भी तारके जालकीही होगी। धूप-वर्षा सब बिना रुकावटके भीतर पड़ सकेगी। इस प्रकार के एक-एक घरमें एक-एक जातिकी चिड़ियाँ रक्खूँगा।"

माँने कहा,—"दुर पागल कहीं का! क्या चिड़ियाखाना बनायेगा? इतना रुपया कहाँ पावेगा? बीस रुपये या अधिकसे अधिक तीस रुपये दे सकती हूँ। उससे जो हो सके वही कर।"

"तीस रुपयेसे क्या होता है? तीस रुपयेसेही यदि हो जाता तो तुमसे माँगने क्यों आता? हज़ार रुपयेसे कममें न होगा।"

माँने कहा—"ओः, हज़ार रुपया खर्च कर किसीने चिड़िया पाली है, यह तो कभी भी सुना नहीं! यह तो होगा नहीं।"

नवगोपाल ने कहा—"वाह! ये बातें मैं नहीं सुनूँगा। तुमने कहा है, तुमको देना होगा।"

माँने कहा—"जब कहा था, तब क्या मैं जानती थी कि तू ऐसा कारखाना करेगा? मनुष्य चिड़ियाँ पालता है, तो दो

पिञ्जरेमें दो चिड़ियाँ पालता है, यही जानती हूँ। तेरी अजब चाल मैं कैसे जानूँगी?"

नवगोपाल मचलने लगा। बचपनसे आदर कर-करके कमलादेवीने उसका भविष्य नष्ट कर दिया है। उसने जब जो ज़िद की है, उसको उसी समय पूरा किया है। कमलादेवी धनवान् की कन्या हैं, धनवान् की पत्नी हैं, बिना क्षोभ के रुपया खर्च कर पुत्रकी सब इच्छायें पूरी की हैं। वह आज क्यों मानने लगा?

नवगोपाल की आंखोंमें आँसू छलछलाने लगा। उस समय माताने कुछ नरम होकर कहा—"अच्छा, एक काम कर, वैसा करनेसे अच्छा होगा। अपने पिञ्जरेको और भी बड़ा बनवा। उसकी छत तारके जाल की न हो, आकाशही उसकी छत हो। उसकी दीवार हो हवा। बाग़ में जो सब चिड़ियाँ है—तोता, मैना, कोकिल आदि, मानले वे सब चिड़ियाँ तेरीही हैं।"

कहकर माँने पुत्रके चिबुक को स्नेह से पकड़ लिया।

नवगोपाल की दृष्टि नीचे थी। उसने ऊपर नहीं की। इस बातसे उसकी आंखोंसे टप-टप कर आँसूके बूँद गिर पड़े।

माँने तब कहा—"यह क्या! देख तो, आंखोंके आँसू पोंछ डाल, पागल हुआ है? तू ऐसा नासमझ है!"—कहकर [illegible]मके साथ आँखोंका जल पोंछ दिया।

अन्तमें पाँच सौ रुपयेमें सब झगड़ा तय हुआ।

उस समय नवगोपाल का कलेजा आनन्द से बाँसों उछलने लगा, मुखपर हँसी फिर आ विराजी। उत्साहके साथ कहा—"सुन माँ, मैं जो चिड़ियाँ पालूँगा, उनको यावज्जीवन पिञ्जरेमें बन्द रक्खूँगा—यह सोचना नहीं। उनके बच्चे होंगे, बच्चोंके बड़े होनेपर पुरानी चिड़ियोंको छोड़ दूँगा।"

माँने कहा—"पुरानी चिड़ियाँ बच्चे छोड़ कर क्या जाना चाहेंगी? मुझे यदि कोई कहे कि तुझको छोड़ कर कहीं चली जाऊँ, तो क्या मैं जा सकूँगी?"

नवगोपालने स्नेहके साथ माँकी ओर देखा। माँका मुख करुणासे अभिषिक्त था।

उस समय दासीने फिर आकर कहा—"दादा बाबू! जलपान बहुत देरसे तैयार है—सूखा जाता है।" कहकर वह चली जा रही थी।

नवगोपालने कहा—"माँका जलपान भी मेरे कमरेमें भेजदेने को बोलो।"

दासीने गृहिणीकी ओर ताका। गृहिणीने सिर हिलाकर अपनी सम्मति दी। दासी चली गई।

नवगोपालने कहा—"तो रुपया दो माँ, कलही चिड़ियाँ, जाल आदि ख़रीदने कलकत्ता जाऊँगा। रेलसे नहीं जाऊँगा। नावसे जाऊँगा। चिड़ियाँ ख़रीद, खूँटी ख़रीद,

लोहेके जाल ख़रीद नौकापर लादकर घर आऊँगा ; रेलसे इतनी चिड़ियाँ लाने की सुविधा न होगी।"

माताने कहा "अच्छा, सब हो जायगा चल बेटा, अब जल खाने तो चल।"

पाँचवाँ परिच्छेद ।

नायिका-परिचय ।

त्रिशालाचोसे पाँच कोस उत्तर, पियाली नदीपर, एक और गाँव बसा है। गाँवका नाम महेशपुर है। नाम जैसा भड़कीला है, गाँव वैसा नहीं। असल में वह गाँव नहीं, कई घरोंकी बस्ती है। वे भी दूर-दूर बसे हैं।

वनके बीच जो एक टूटा-फूटा घर दिखाई देता है, वह गदा-धर चट्टोपाध्याय का वासभवन है। गदाधर कान्तिचन्द्रके प्रतियोगी ज़मीन्दार, सोनापुरके बाबुओंके यहाँ चाकरी करते है। वे नदीके दोनों ओरके कई एक गाँवोंके गुमाश्ता हैं। गाँव-वालोंसे मालगुज़ारी की रक़म वसूल कर अदा करनेका भार उनपरही है। वे मालगुज़ारी वसूल कर बीच-बीचमें सोना-पुर को कचहरी में जा सदर-नायब को हिसाब समझा आते हैं।

गदाधर चट्टोपाध्याय के कुलमें एक बड़ा भारी दोष है। इस कारण, दस वर्ष हुए स्त्रीका वियोग होनेपर भी, उनका विवाह नहीं हुआ। उनका एक पुत्र युवा है, पश्चिममें कहीं नौकरी करता है। वे अबतक उसका विवाह नहीं कर सके। दो कन्यायें हैं—एकका नाम रमासुन्दरी और दूसरीका नाम राजलक्ष्मी है। रमाकी अवस्था चौदह वर्षकी हो चुकी, किन्तु अबतक विवाह नहीं हुआ। कन्या बड़ी हो गई और उसका विवाह नहीं हुआ, इस बातकी गदाधरको बड़ी दुश्चिन्ता रहती है, किन्तु करें क्या? कोई उपाय नहीं। इन दो कन्याओं के अतिरिक्त उनके घरमें उनकी विधवा बहन रहती है। उसे आँखोंसे दिखाई नहीं देता, कानोंसे भी अच्छी तरह सुनाई नहीं पड़ता, तथापि अटकलसे घरका सब काज करती है। घर में लक्ष्मी नामकी एक हिन्दुस्तानी दाई भी रहती है। इस दाईका इतिहास कुछ कौतुकपूर्ण है। उसका जन्म राजपूत-कुलमें हुआ है। सिपाही-विद्रोहके समय, उसके पिता बल-वन्तसिंहने विद्रोहियोंका साथ कर धन और प्राण दोनों विस-र्जित किये। उसके भ्रातृपुत्रका वंश अभी प्रतापगढ़का राणा है। किन्तु उसके वंशकी बालक-बालिकायें कोई भिक्षा और कोई नौकरी कर अपना गुज़ारा करती हैं। पन्द्रह वर्ष पहले जब गदाधर चट्टोपाध्याय नौकरीके कारण छः महीनों तक काशीमें सपरिवार रहे थे, उसी समय उनके परिवारमें लक्ष्मी को स्थान मिला था। गदाधरके पुत्र और दो कन्याओंका

बिल्कुल बचपनमेंही मातृवियोग होनेपर लक्ष्मीही ने उनको अपने आदर्शके अनुसार मनुष्य बनाया था।

रमासुन्दरी बड़ी सुन्दरी है। किन्तु सुन्दरी होनेसे क्या, वह बड़ी दुर्दान्त है। उसकी दुर्दान्तताका मूल चाहे दाई का दोष हो, चाहे उसका जन्मसे वफल। भाग्यसे उसके पिताका घर भी जङ्गलमें है, नहीं तो समाजमें सिर ऊँचा करने तककी क्षमता न रहती। रमा जङ्गली बिल्लियोंकी तरह पेड़पर चढ़ जाती है। बंसी लेकर तलैयोंमें मछलियाँ पकड़ती है—और क्या, तीर तक चलाना उसे मालूम है। रमा लक्ष्मीको प्राणसे प्यारी है। उसे लड़कपनसेही लक्ष्मीने अपनी बेटीकी तरह प्रेमके साथ काछनी देकर कपड़ा पहननेका अभ्यास कराया है। इस समय भी रमा प्रायः इसी तरह कपड़ा पहनती है। लक्ष्मीके हाथोंकी तैयार की हुई बेलबूटेदार अङ्गिया सदा उसकी शोभावृद्धि करती है। राजलक्ष्मीकी वेशभूषा भी उसकी बहनकी वेशभूषाके अनुरूपही है, किन्तु उसकी प्रकृति बहन की तरह वैसी क्षत्रियानी-सुलभ नहीं है।

लक्ष्मी जब दोपहरको रमा, राजलक्ष्मी और पड़ोसके दो-एक घरोंकी बालिकाओंको इकट्ठीकर टूटी-फूटी बङ्गला भाषामें स्वदेशीय ऐतिहासिक कथायें कहती है, सिपाही-विद्रोह की कथा कहती है—उस समय उस वीरव्रतधारिणी राजपूत-रमणीके मुँहसे वीररसकी गल्प सुनते-सुनते रमाका हृदय उत्तेजनासे उद्दीप्त हो उठता है।

युद्ध आदिका वर्णन सुनते-सुनते रमा आहार-निद्रा तक भूल जाती है। पड़ोसमें रहनेवाले यदु पुरोहित महाशयकी स्त्री घरमें दोपहरको प्रायःही महाभारत पढ़ती हैं। रमा उनके घर जाकर स्थिर और निश्चल हो बैठी-बैठी वही सुनती है। जो अंश उसको अच्छे लगते हैं, उन सब अंशोंको पुनःपुनः सुननेके लिये वह बड़ी ज़िद करती है। पुरोहित-पत्नी भी आह्लाद के साथ उसकी ज़िद पूरी करती हैं। इस तरह सुनते-सुनते महाभारतके अनेक अंश उसे याद हो गये हैं।

रमाको वाण चलानेकी विद्या सिखानेवाली लक्ष्मीही है। पहले रमा वृक्षोंमें चिह्न कर लक्ष्यभेद करती थी। एक दिन उसने एक पक्षीको बाण मारा। पक्षी जब कातरकण्ठसे कूजन कर फड़फड़कर गिर पड़ा तब रमाने तीर-धनुष फेंक, दौड़कर आहत पक्षीको गोदमें उठा लिया और उसके शरीरपर जल सींचकर डबडबायी हुई आँखोंसे उसके बचानेकी चेष्टा की। किन्तु पक्षी नहीं बचा। तबसे तीर-धनुष उठाकर रख दिया है, अब उसे नहीं छूती। यदि कोई बालक-बालिका उसे लेने जाती है, तो कहती है, "ख़बरदार छूना नहीं"—किन्तु उसकेही मनमें अनेक समय दुर्निवार लालसा जग उठती है।

नदीके किनारे आमका एक बग़ीचा है। दोपहर की कड़ाकेकी धूप पड़ रही है। आमका बग़ीचा होनेपर भी उसमें खजूर, नारियल, चकोतरा नीबू आदिके और भी वृक्ष हैं। नारियलका

प्रायः प्रत्येक वृक्ष हरे-हरे नारियलोंसे लदा है। खजूरके पेड़ोंमें खजूर भी हरे हैं, किसी-किसीमें पीला रङ्ग चढ़ने लगा है। आम सभी हरे हैं, उनके पकनेमें अभी विलम्ब है। गदाधरके घरकी खिड़कीका दरवाज़ा खोलकर कई एक बालिकायें बाहर आईं। आगे रमा थी, उसके हाथमें आम तोड़नेकी लग्गी थी, पीछे चलनेवाली बालिकाओंके हाथोंमें टोकनियाँ थीं। कासुन्दी (एक प्रकारका अचार) तैयार करनी होगी, इसीलिये ये सब आम तोड़ने आई हैं।

रमाने एक बड़े वृक्षके नीचे आकर, लग्गीको ज़मीन पर फेंक दिया और आँचलका कपड़ा अपनी कमरमें दृढ़तासे बाँधा। इसके बाद आम तोड़नेमें प्रवृत्त हुई। कभी फलोंसे लदी हुई शाखामें अंकड़ी अटकाकर ज़ोर-ज़ोरसे उसे हिलाती, कभी आमके किसी गुच्छेके ऊपर अङ्कड़ी लगाकर गुच्छेको नीचे गिरा लेती। पटा-पट चारों ओर आमोंकी वर्षा होने लगी। सब बड़े उत्साहसे दौड़-कूद कर आम जमा करने लगीं। एक बार एक आम एक बालिकाकी पीठपर बहुत ज़ोरसे गिरा। चोटसे लड़की रो पड़ी—दूसरी सब हँसने लगीं। रमाने कहा—"उहूँ, पीठपर एक आम गिर पड़ा, इसके लिये इतना रोना ?"

उसने कहा—"यदि अपनी पीठपर गिरता तो मालूम हो जाता।"

रमाने तुरन्त जवाब दिया—"अच्छा, मैं झुक कर खड़ी

होती हूँ, मेरी पीठपर कोई आम गिराओ ।" कह कर वह सुन्दरी धनुषकी तरह झुककर खड़ी हुई। सब पारी-पारीसे अङ्कड़ी लेकर उसकी पीठपर आम गिरानेकी चेष्टा करने लगीं, किन्तु उनमेंसे कोई कृतकार्य न हुई। आम आसपास गिरने लगे, किन्तु रमाकी पीठपर एक भी न गिरा।

इस प्रकार एक पेड़से दूसरे पेड़को जाकर लड़कियाँ आम तोड़ने लगीं। टोकनियाँ सब भर गईं। आम तोड़नेका काम भी चल रहा था, इधर मुँह भी चल रहा था। आँचलमें एक-एक आम लेकर कपड़ेके साथ उसे पेड़की जड़में पटक-पटक कर चूर्ण करती थीं। इसके बाद गुठली निकाल कर लवण के साथ चर्वण होता था। धीरे-धीरे दाँत खट्टे हो गये, शरीर काँप उठने लगा, तथापि मुँहको विश्राम नहीं।

जिस लड़कीकी पीठपर एक बार आम गिरा था, उसीको इस बार वृक्षके चींटेने काट खाया। वह फूट-फूटकर रोने लगी। रमा जाकर उसको समझाने लगी, स्वरचित मन्त्र से फूँक मारने लगी, किन्तु कुछ भी नहीं हुआ। अन्तमें वह बालिका रोती-रोती थक गई।

इसी समय सिरके ऊपर पक्षियोंका कलरव सुन पड़ा। सब ने ऊपर मुँह कर देखा कि दो सब्ज़ रङ्गके पक्षी उड़-उड़ कर विचर रहे हैं। इस वनमें अनेक पक्षी हैं। उन पक्षियोंसे ये सब बालक-बालिकायें परिचित हैं। किन्तु ऐसी चिड़िया इन सबने कभी देखी न थी। एकने कहा—" कौनसी

चिड़िया है, री ?" एकने कहा—"तोते हैं।" किसी दूसरीने कहा— 'हुँ, तोता कहीं इतना बड़ा होता है ? और होंठ क्या इस तरह मोटे होते हैं ?" रमाने कहा—" ये पची इस वन के नहीं हैं, इन्हें पकड़ना होगा।" कहकर और दौड़ती हुई घर जाकर चिड़िया पकड़नेका जाल ले आई।

दोनों चिड़ियाँ उस समय एक पेड़की डाल पर बैठी थीं। कन्धे पर जाल रखकर रमा पेड़पर चढ़ गई। जिस डाल पर चिड़ियां बैठी थीं, उसके पासकी एक डालपर धीरे-धीरे जाकर चिड़ियोंके ऊपर जाल फेंका। एक चिड़िया उड़ गई, किन्तु दूसरी जालमें फँस गई। छटपटाती हुई चिड़िया जालके साथ भूमिमें आ गिरी। चिड़ियाको गिरते देखकर कई एक बालिकायें उसी ओर दौड़ीं, किन्तु पेड़परसे रमाने कहा—"खबरदार, कोई हाथ न लगाना, उड़ जाने पर मज़ा चखा दूँगी।" बालिकायें डरकर अलग खड़ी हुईं। रमा तब नीचेकी एक डाल पकड़कर झूल पड़ी। डाल रमाको लिये ऊपर-नीचे झूलने लगी। इच्छापूर्वक कुछ चण इसी प्रकार झूलते-झूलते रमा ज़ोरसे, "जय माँ काली" कहकर ज़मीनमें कूद पड़ी। उतरतेही एक टोकनीके आम खाली कर और उसे उलट कर बड़ी कुशलतासे चिड़ियेको जालसे टोकनीके भीतर प्रविष्ट कराया। जाल खाली होतेही उसे लेकर रमा दूसरी चिड़ियाकी खोजमें दौड़ी। किन्तु इस वृक्ष से उस वृक्षपर चढ़कर भी उसे पकड़ न सकी। चिड़िया इस

पेड़से उस पेड़पर उड़कर बैठने लगी। धीरे-धीरे रमा थक गई। अनुचरों और सहचरियोंको आदेश किया—"तुम लोग जाओ, इस बातकी खोज रक्खो कि वह कौनसे पेड़पर बैठती है, मैं घरसे पिञ्जरा लाकर इस चिड़ियेको रख आती हूँ।" वे सब उस चिड़ियेकी खोज रखनेके लिये चली गईं। रमा घरसे लोहेका एक पुराना पिञ्जरा उठा लाई। टोकनीके भीतरसे चिड़िया किस तरह पिञ्जरेमें पहुँचाई जाय, इस समय यही समस्या थी। जालके भीतरसे टोकनीके भीतर तो चिड़िया सहजही घुस गई थी, किन्तु टोकनीके भीतरसे बाहर करनेमें कहीं उड़ न जाय। सोचते-सोचते रमाको एक उपाय सूझा। टोकनीको एक ओर ज़रा ऊपर कर उसे चारों ओर ठोंकने-पीटने लगी। इससे चिड़िया घूम-घूम कर फिरने लगी, अचानक उसकी पूँछ कहीं बाहर निकल पड़ी। रमाने तुरन्त पाँवसे पूँछको दबा लिया और टोकनीको उठाकर फेंक दिया। हाथसे चिड़ियेको पकड़कर पिञ्जरेमें बन्द करने लगी। किन्तु सताई हुई चिड़ियाने 'क्याँक्' कर उसकी एक अँगुली काट खाई। चिड़ियेको पिञ्जरेमें तो बन्द कर दिया, किन्तु रमाको अँगुलीसे कलकल कर रक्त बहने लगा।

पिञ्जरेका दरवाज़ा बन्दकर रमा नदीकी ओर चली। घाव लगी अँगुलीको कुछ क्षण तक पानीमें डुबो रक्खा। रक्त गिरना कुछ बन्द होनेपर, अञ्चलसे ज़रासा कपड़ा फाड़ और उसे पानीसे भिंगोकर अँगुलीपर लपेट लिया। घाव अब भी बहुत जल रहा था।

पेड़के नीचे आकर रमाने चिड़िये पर अपना गुस्सा निकालनेका मौका पाया । आम तोड़नेकी अङ्कड़ी लेकर पिञ्जरेपर धमाधम मारने और कहने लगी—"अभागी चिड़िया, और काटेगी ? और काटेगी ? और काटेगी ?" उसका क्रोधसे उद्दीप्त मुख ऐसा निरुपम उज्ज्वल हो उठा, उसकी अङ्गभङ्गी ऐसी चित्रवत् हो गई, कि उसको स्वयं तो कुछ मालूम न हुआ, किन्तु देखनेवालेका मन अवश्य हाथसे निकल जाता ।

क्रोधके बहुत कुछ शान्त हो जानेपर रमाने सोचा, इस समय पिञ्जरेको घरमें रख दूसरी चिड़ियाकी खोजमें जाना आवश्यक है । यह सोचकर पिञ्जरेको हाथमें उठा लिया । पीछे घूमतेही देखा कि एक गोरा, ऊँचा, सुन्दर युवा पुरुष खड़ा-खड़ा मुसकरा रहा है ।

छठाँ परिच्छेद।

प्रथम दर्शन।

युवाने रमाके हाथके पींजरेकी ओर देख कर कहा—"यह चिड़िया मेरी है, मुझे दो।" इसने "जय माँ काली" कह कर पेड़से झूल कर कूदने तक सब हाल दूरसे देखा है।

समाज-शिक्षा-विहीना रमाने उसकी ओर उपेक्षाकी दृष्टिसे देख, भौंह चढ़ा कर कहा—"तुम्हारी चिड़िया? तुम कौन हो? चिड़ियेकी देहमें क्या तुम्हारा नाम लिखा है?"

एक युवती कन्याके मुँहसे इस प्रकारकी निःसंकोच बातें सुनकर नवगोपालको बड़ा आनन्द आया। उसने उस भावको छिपा कर कहा—"मेरीही चिड़िया है। मैं नौकासे आता हूँ, मैं एक नौका चिड़ियां लिये जाता था, एक पिंजड़ा खुला पाकर अकस्मात् कुछ चन्दना उड़ गईं, उनकाही पता लगाने आया हूँ।"

रमाने कुछ स्वर नीचाकर कहा—"एक नौका चिड़ियाँ?"

"हाँ, एक नौका चिड़ियाँ।"———

"कौनसी चिड़ियाँ हैं? सब इसी प्रकारकी हैं?"

नवगोपालने बालिकाके भाव-परिवर्त्तनकी ओर लक्ष्य कर लुभाने जैसे स्वरमें कहा—"एक नौका चिड़ियाँ हैं, केवल चन्दनाही क्यों? छोटी बड़ी, काली, सब्ज़, लाल, कितने रंगबिरङ्ग की चिड़ियाँ हैं।"

रमाने कहा—"क्या तुम चिड़ियोंका व्यापार करते हो?"

नवगोपालने कुछ सोच कर कहा—"हाँ।"

"तुम्हारी नाव कहाँ है? मुझे अपनी चिड़ियाँ दिखाओगे?"

नवगोपालने घाटकी ओर अंगुली दिखा कर कहा—"इसी घाट पर मेरी नाव बँधी है। यदि चिड़ियों को देखना हो तो मेरे साथ चलो।"

रमा आनन्दित हो उठी। कहा—"अच्छा, ज़रा ठहरो। पिञ्जरा घरमें रख आती हूँ।" कहकर और उत्तर की अपेक्षा न करके दौड़ती हुई घरमें घुस गई।

नवगोपाल खड़ा-खड़ा सोचने लगा—ऐसी अद्भुत लड़की तो मैंने कभी देखी नहीं। वेशभूषा और चालढाल तो बालिकाओंकी तरह और देखनेमें नवयौवना देवी सरीखी। बातें वंगवासिनी जैसी और वस्त्र पश्चिमवासिनी जैसा। सोचा, लड़की कौन है, पता लगाना होगा। इतनी बड़ी लड़की, विवाहही क्यों नहीं हुआ? कपालमें तो सिन्दूर नहीं है।

रमा आ पहुँची। इस समय उसका मलवेश नहीं है। हाथ और मुँहकी धूल भी धो आई है। नवगोपालके मुँहकी ओर देख कर बोली—"चलो।"

दोनों चले—यहाँ यद्यपि सुन्दरवन नहीं है तथापि ख़ूब जङ्गल है। अनेक वृक्षादि हैं। कहीं-कहीं सिरके ऊपर आकाश तक नहीं दिखाई देता। अधिकांश वृक्षोंहीमें लताएँ लपट रही हैं। उन लताओंमें तरह-तरहके फूल फूले हैं। ज़मीन यहाँकी सूखी है, वैशाखकी धूपसे सूख गई है। नहीं तो वर्षाके अधिकांश समय तक यहाँ कीचड़ रहता है। मार्गमें दोनोंकी बातें होने लगीं। प्रश्न कर-करके नवगोपालने रमाके सम्बन्ध की अनेक बातें जान लीं। किन्तु वह चिड़ियों का व्यवसायी नहीं है, यह रमाके निकट प्रकट नहीं किया।

इसी तरह वे नदीके किनारे आ पहुँचे। नाव बन्धी थी। नाव की छत पर एक मंचसा बना हुआ है। उसी मंच और छतके बीचमें चिड़ियोंके अनेक पिञ्जरे हैं। एक-एक जातिकी चिड़ियाँ एक-एक पिंजरेमें बन्द हैं। किसी पिञ्जरेमें दस बारह चिड़ियाँ हैं, किसीमें और भी अधिक हैं। नवगोपाल रमाको एक-एक कर पिञ्जरे दिखाने लगा। रमाको बड़ा-ही आनन्द हुआ। वह चिड़ियोंके सम्बन्धमें नवगोपालसे हज़ारों सवाल करने लगी। देखना ख़तम होने पर नवगोपालने उससे कहा—"चलो, तुमको घर पहुँचा आऊँ।" छतसे नीचे उतरकर नावसे उतरनेके पहले रमाने नावके भीतर

झाँका। देखा, एक बन्दूक टङ्गी है। पूछा—"वह किसकी बन्दूक है ?"

नवगोपालने कहा—"मेरी बन्दूक है।"

"तुम बन्दूक चलाना जानते हो ?"

"जानता हूँ।"

"एक बार चला कर दिखाओ न।"

"अच्छा"—कह कर नवगोपाल बन्दूक, बारूद आदि बाहर लाया। कहा—"यहाँ चलानेसे मेरी चिड़ियाँ डरेंगी ; चलो, रास्ते पर चलाऊँगा।"

दोनों नावसे उतरे। रमाने कहा—"मैंने कभी बन्दूक नहीं चलाई।" बड़ा विनयपूर्ण हताश्वास स्वर था।

नवगोपालने सोत्साह कहा—"तुम बन्दूक चलाओगी ?"

"मैं तो जानती नहीं, किस तरह चलाना होता है ?"

"मैं तुम्हें सिखा दूँगा।" कह कर नवगोपालने कहा—"मैं पहले चलाता हूँ, देखो। इस तरह हाथ नीचे रखना होता है। इस तरह टोटा लगाना होता है। इसके बाद, इस तरह निशाना लगाना होता है, इस तरह घोड़ा गिरा देना होता है।" यह कहनेके साथही बन्दूक की आवाज़ हो गई। मुँहसे बहुत धुआँ बाहर निकला।

रमाने कहा—"इस बार मैं चलाऊँगी—दो!" कह कर नवगोपालके हाथसे बन्दूक ले ली। पहले वह टोटा न

भर सकी। नवगोपालने भर दिया, चलानेके लिये बन्दूकका कुन्दा छातीपर रख रमा प्रस्तुत हुई।

नवगोपालने कहा—"इस तरह नहीं, इस तरह नहीं। छातीपर रखना नहीं, आवाज़ होनेपर बन्दूक पीछे हटती है, मनुष्यको गिरा देती है। इस तरह पाँजरके पास और हथेली पर रखना होता है।"

नवगोपालने जैसा बताया वैसेही बन्दूक धर कर रमाने घोड़ा गिरा दिया। बन्दूक आग उगल कर फिर गर्जना कर उठी। उस समय रमाका आनन्द कौन देखे! कहा—"एक बार और चलाऊँगी।"

रमाके साहस और शौक़को देख कर नवगोपालके आश्चर्यकी सीमा न रही।

इसके बाद दोनों घरकी ओर चलने लगे। इस समय इस बन्दूकवाले पुरुषके प्रति रमाकी बड़ी भक्ति हो गई। इस समय एकबार उसके मुख की ओर अच्छी तरह देख कर पूछा—"तुम किन-किन जन्तुओंका शिकार करते हो?"

नवगोपालने कहा—"मैंने हरिण, जङ्गली सुअर और अनेक पक्षी मारे हैं।"

पक्षी मारनेकी बात सुनकर रमाके हृदयमें कुछ व्यथा हुई।

उसने कहा—"बाघ भी कभी मारा है?"

"एकबार एक बाघ मारा है।"

नवगोपालने कहा—"इस तरह नहीं, इस तरह नहीं। छाती पर रखना नहीं, आवाज़ होने पर बन्दूक पीछे हटती है, मनुष्य को गिरादेती है।" (पृष्ठ ४६)

NARSINGH PRESS, CALCUTTA.